Indian J. Soc. & Pol. 05(01):141-146:2018 **ISSN: 2348-0084(PRINT)**
UGC List No. 47956 **ISSN: 2455-2127(ONLINE)**

भारत में नौकरशाही एवं सुशासन

धर्मेन्द्र कुमार[1a]
[a]शोध–छात्र,राजनीति विज्ञान विभाग,जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार, भारत

ABSTRACT

किसी भी राजनीतिक व्यवस्था में नौकरशाही शासन–प्रशासन का मेरूदंड होता है। लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रणाली में कार्यपालका दो तरह की होती है – राजनीतिक एवं अराजनीतिक कार्यपालिका। राजनीतिक कार्यपालिका का कार्यकाल चुनाव के परिणाम पर निर्भर करता है तथा मतदाता के विश्वासपर्यन्त ही कायम रहता है। इसलिए इसे अस्थायी कार्यपालिका भी कहा जाता है। अराजनीतिक कार्यपालिका के तहत अधिकारीतंत्र या नौकरशाही वर्ग आता है जो राजनीतिक कार्यपालिका के नियंत्रण एवं निर्देशन में काम तो करता है मगर राजनीतिक सत्ता परितर्वतन से अप्रभावित रहता है। इसलिए इसे स्थायी कार्यपालिका भी कहा जाता है। अधिकारी–तंत्र की वजह से ही समय–समय पर होने वाले सत्ता परिवर्तन के बावजूद शासन–प्रशासन में स्थायित्व एवं निरंतरता बनी रहती है। गौरतलब है कि अधिकारीतंत्र एक निर्धारित सेवाशर्त के अधीन, नियम–कानून के दायरे में रहकर शक्ति एवं सत्ता का जनहित में उपयोग करते हैं तथा राजनीतिक नेतृत्व के प्रति और अंततः जनता के प्रति उत्तरदायी होते हैं इसीलिए इन्हें लोकसेवक भी कहा जाता है। ये अपनी प्रकृति से निष्पक्ष, कार्यकुशल, दक्ष एवं प्रशिक्षित प्रशासक होते हैं जो राजनीतिक नेतृत्व (सरकार) को नीति–निर्माण में सहयोग एवं परामर्श देते हैं तथा सरकार के निर्णयों को कार्यान्वित करते हैं।

***KEY WORDS:** नौकरशाही, सुशासन, अधिकारी तंत्र, लोक कल्याणकारी राज्य*

लोक–कल्याणकारी राज्य की अवधारणा ने राज्य के कार्यक्षेत्र को असीमित एवं अनंत बना दिया है फलतः अधिकारी–तंत्र की भूमिका अत्यंत विस्तृत, व्यापक, बहुउद्देश्यीय, बहुआयामी तथा निर्णायक हो गई है। सुशासन एवं विकास की महती जवाबदेही अधिकारीतंत्र के जिम्मे ही है। अतः अधिकारी–तंत्र सरकार के लिए आँख–कान, हाथ, पैर के समान होते हैं जिसके बिना सुशासन एवं विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है। प्रो. डोनहम के शब्दों में ''यदि हमारी सभ्यता असफल होती है तो ऐसा मुख्यतः प्रशासन के पतन के कारण होगा। राज्य की क्रियाओं की सफलता या विफलता लोक प्रशासन पर ही निर्भर है।''(शर्मा,1976 पृ014) दुर्भाग्य से भारत में अधिकारी–तंत्र या नौकरशाही की छवि आमजनमानस में सकारात्मक कम एवं नकारात्मक ज्यादा है।

काबिलेगौर है कि ब्यूरोक्रेसी एक फ्रेंच शब्द है जिसका सबसे पहले प्रयोग 1745 में फ्रांसीसी अर्थशास्त्री विंसेट डी गार्ने ने किया। गार्ने ने कहा कि फ्रांस में एक बीमारी है जो हमें तबाह कर रही है, यह बीमारी ब्यूरोमेनियम कहलाती है। नौकरशाही शब्द का प्रयोग प्रारंभ में एक ऐसी सरकार को बताने के लिए किया गया जो अधिकारियों द्वारा चलाई जाती है। इसी आधार पर जॉन वीग ने कहा है कि विकृति और व्यंग्य के रूप में नौकरशाही शब्द का अर्थ काम में घपला, मनमानी, अतिव्यय, हस्तक्षेप तथा वर्गीकरण माना जाने लगा है।(मार्क्स,1969 पृ052) के. डी. बाटा नौकरशाही की व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि संरचनात्मक दृष्टि से यह मूल्यों से परे है, न यह नायक है और न ही खलनायक, इसे ऐसी घटना समझा जा सकता है जो किसी भी बडे तथा जटिल संगठन के साथ जुड़ी हो। व्यवहार की दृष्टि से इसे ऐसा संगठन समझा जा सकता है जिसके कुछ कार्यात्मक तथा विकृत वैज्ञानिक चित्र प्रकट होते हैं। लक्ष्य की पूर्ति अथवा उपलब्धियों की दृष्टि से यह ऐसा संगठन है जो प्रशासन में कार्यकुशलता को अधिक से अधिक बढ़ाता है।(बाटा,1978पृ02) मैक्स बेबर को नौकरशाही की आधुनिक अवधारणा का जनक माना जाता है क्योंकि उन्होंने प्रतिकूल निहितार्थों से मुक्त नौकरशाही के आधुनिक समाजशास्त्रीय अध्ययन की नींव डाली और किसी संगठन के लक्ष्यों की तर्कसंगत प्राप्ति के लिए नौकरशाही की अनिवार्यता पर बल दिया। वेबर का कथन है कि नौकरशाही का विकास इसलिए हुआ कि यह अपनी विवेकशीलता और तकनीकी श्रेष्ठता के गुण के कारण आधुनिक जटिल समाज की समस्याओं और कार्यों का सामना करने के लिए सबसे उचित यंत्र साबित हुआ है। काबिलेगौर है कि प्रारंभ में नौकरशाही एवं लोकसेवा (सिविल सर्विस) के बीच अंतर माना जाता था। नौकरशाही के अंतर्गत सैन्य एवं न्यायिक प्रशासन भी शामिल है जबकि लोकसेवा के तहत केवल असैन्य प्रशासन को शामिल किया जाता है। लोकसेवा से अपेक्षा की जाती है कि वह निष्पक्षता से चयनित, प्रशासनिक रूप से कार्यसक्षम, राजनीतिक तौर पर निष्पक्ष तथा समाज की सेवा की भावना से ओत–प्रोत हो। चूँकि वेबर के प्रतिमान में बताई गई लगभग सभी विशेषताएँ कमोवेश हमारी लोक सेवाओं में भी पायी जाती हैं इसलिए कालांतर में हम लोक सेवाओं को ही नौकरशाही कहने लगे हैं। विकसित अधिकारी–तंत्र की अनिवार्यता आधुनिक युग का केन्द्रीय राजनीतिक सत्य है।(वही पृ066) इस संबंध में मार्टिन क्रिगिर का

1: Corresponding Author

कहना है कि एक प्रशासनिक संगठन के रूप में जो हर प्रकार के उपक्रम में पाया जाता है, इसका प्रभाव आधुनिक संसार में विवेकशीलता के किसी भी अन्य वाहक की अपेक्षा बहुत अधिक विस्तृत है और प्रशासनिक संगठन के रूप में सबसे अधिक विकसित होने के कारण यह अधिक शक्तिशाली है तथा उसके प्रभाव से बचना अधिक कठिन है।(वही पृ066)

मानव सभ्यता के विकास के समय से ही राज्य और सुशासन एक दूसरे के पूरक माने जाते रहे हैं। राज्य की उत्पत्ति निःसंदेह मानव कल्याण के लिए हुई तथा मानव समाज ने राज्य की सत्ता को सामान्य हित, मानव कल्याण, न्याय, और सुशासन की व्यवस्था को प्राप्त करने की आशा में स्वीकार एवं आत्मसात किया है। ऐसे में राज्य द्वारा सदैव से अच्छे शासन की कल्पना की जाती है और यही अपेक्षा की जाती है कि राज्य अपने नागरिकों को विकास के शिखर बिन्दू तक ले जाएगा। यह अच्छा शासन की अवधारणा ही 'सुशासन' है। सुशासन को जनसाधारण की भाषा में अच्छा शासन कहा जाता है जिसका अंग्रेजी रूपांतरण गुड गवर्नेंस है। अतः सुशासन या अच्छे शासन को समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि 'शासन' क्या है और तब शासन में 'अच्छा' क्या है। समकालीन संदर्भ में शासन को तीन अर्थों में समझा जा सकता है। प्रथम, यह एक राजनीतिक प्रणाली है जिसमे सामान्य जनता पर शासन किया जाता है। दूसरे, यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्राधिकार का प्रयोग कर देश के आर्थिक और सामाजिक संसाधनों का अधिकतम प्रयोग किया जाता है। तीसरे रूप से यह एक ऐसा तंत्र और सरकार की क्षमता है जिसमें लोकनीतियों का निर्माण हो सके तथा उन नीतियों का सही कार्यान्वयन हो सके। शासन शब्द में 'सु' उपसर्ग जोड़ कर सुशासन बना है जिसका मतलब है – सुन्दर शासन, वैसा शासन जो शासितों की अपेक्षाओं और कसौटियों पर खरा उतरे। इस दृष्टिकोण से सुशासन की अवधारणा बहुत व्यापक अर्थ समेट लेती है जिसका उद्भव हम वेद, गीता, महाभारत, बाइबल, कुरान जैसी धार्मिक पुस्तकों व राजनीतिक विचारको की कृतियों जैसे प्लेटों की रिपब्लिक, कौटिल्य के अर्थशास्त्र अथवा मार्क्स की कृतियों में भी पाते हैं। भारत में सनातन धर्म, संस्कृति और उसके राजनीतिक दर्शन में सुशासन एक महत्वपूर्ण अवधारणा है जो सामान्य हित को संरक्षित और परिवर्धित करता है, लोकसेवाओं को अपने कर्तव्यों एवं आचरण के प्रति सजग रखता है। भारतीय वेदों में कहा गया है कि 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया, सर्वे भद्राणि पश्युन्तु मा कश्चित दुखभाग भवेत।' अर्थात् सभी लोग सुखी हो, सभी निरोगी हो तथा सभी कल्याण को देखें और कोई भी दुख का भागी न बने। वास्तव में सुशासन का सार भी यहीं है। भारतीय संस्कृति की एक और प्रचलित दार्शनिक अवधारणा 'वसुधैव कुटुम्बकम' आज भी प्रासंगिक है। जब हम सुशासन एवं वैश्वीकरण को साथ–साथ रखकर देखते हैं तो पाते हैं कि जब तक हम संपूर्ण विश्व को अपना परिवार नहीं समझेंगे तब तक सभी का कल्याण संभव नहीं है। मनु स्मृति में भी कहा गया है कि सभी अधिकारी प्रजा की भलाई के लिए ही कार्य करे।(मनुस्मृति, 324वां श्लोक) कौटिल्य ने अपनी जगत प्रसिद्ध रचना 'अर्थशास्त्र' में राजा से सर्वाधिक अच्छे आचरण की अपेक्षा की है। महात्मा गाँधी ने तो स्वराज और सुराज दोनों ही अवधारणाओं को प्रकट किया। उन्होंने स्वराज के माध्यम से सुराज स्थापित करने पर बल दिया। वास्तव में सुशासन का ध्येय भी यही है कि समाज के शोषित, दलित, उत्पीड़ित एवं हाशिए पर रहने वाले लोगों को मुख्यधारा में लाया जाए तथा गरिमामय जीवन जीने की परिस्थितियों का निर्माण किया जाए। लोक प्रशासन के जनक विल्सन ने लिखा है कि मानव सेवा से बड़ा कोई धर्म नहीं है और सभी के लिए कार्य करना सबसे महान सिद्धांत है। हमें प्रशासन के विज्ञान की जरूरत है ताकि दक्षता की प्राप्ति हो। राजनीति मूल्यों से जुड़ी है और प्रशासन तथ्यों से जुड़ा है। प्रशासन का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि निर्धारित कार्य को कैसे सबसे कम पैसे, श्रम, समय तथा सबसे अधिक कुशलता से किए जा सकते हैं।(विलसन,1886पृ039) आज हम सुशासन के माध्यम से भी यही खोजने का प्रयास कर रहे हैं। गुड नाउ ने अपनी पुस्तक 'राजनीति एवं प्रशासन' में लिखा है कि राजनीति राज्य की इच्छा को प्रतिपादित करती है तथा प्रशासन इस इच्छा या नीतियों के क्रियान्वयन से संबंधित है। राज्य की इच्छा और कुछ नहीं मात्र अच्छी सरकार या सुशासन स्थापित करना है।(गुडनाउ 1990 पृ016) स्पष्ट है कि सुशासन उद्देश्यपरक तथा विकासोन्मुख प्रशासन के समान है जो जनसामान्य के जीवन की गुणवत्ता में सुधार हेतु कटिबद्ध है। यह व्यवस्था की साख, उसकी वैधानिकता तथा उच्चतम दक्षता को स्थापित करने हेतु शासन के नवीन मूल्यों को आत्मसात करने की ओर इंगित करता है।(मिनोचा,1985 पृ272) आम आदमी की नजर में सुशासन बेहतर शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, बिजली, पानी, कुपोषण एवं कानून–व्यवस्था की समस्या के समाधान करने का विकल्प है। सुशासन प्रशासन के उच्चपदीय गुणों को स्थापित करने तथा उसके दुर्गुणों एवं कुरीतियों को दूर करने का कार्य है। स्पष्ट है कि सुशासन दक्ष, उत्तरदायी, पारदर्शी, साखयुक्त और वैधानिक प्रशासनिक व्यवस्था की स्थापना करता है जो नागरिक मित्र, मूल्ययुक्त तथा लोकभागीदारी से परिपूर्ण होता है। यह विकास की बुनियादी शर्त्त है।

गौरतलब है कि सुशासन के माध्यम से ही विकास के निर्धारित लक्ष्य को हासिल किया जा सकता है। भारत जैसा विकासशील लोकतांत्रिक देश जो अभी मानक विकास से कोसो दूर है, जहाँ एक तिहाई आबादी आज भी गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन हेतु मजबूर है, रोटी, कपड़ा और मकान भी सबको मयस्सर नहीं है, बुनियादी शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवा की दशा सोचनीय है, ऐसी स्थिति में विकास एवं बदलाव हेतु सुशासन अनिवार्य है और सुशासन स्थापित करने की महती जवाबदेही अधिकारी–तंत्र या नौकरशाही की है।(भट्टाचार्य, 2008पृ0264)

स्पष्ट है कि सुशासन ही वह राजपथ है जिसपर विकास का घोड़ा सरपट दौड़ सकता है और सुशासन रूपी राजपथ के निर्माण, तथा उसे विघ्नबाधाओं एवं अवरोधों से मुक्त रखने की जवाबदेही नौकरशाही की ही है। सुशासन आज की आवश्यकता बन गया है, फिर भी नौकरशाही की कार्यप्रणाली एवं मानसिकता में यथोचित बदलाव दृष्टिगोचर नहीं हो रहाहै। इसका मूल कारण बदलाव की गति का धीमा होना है। नौकरशाही में व्याप्त अनेक त्रुटियों के बावजूद वर्तमान में कल्याणकारी राज्यों में इसकी भूमिका, सर्वोपरि बनी हुई है, क्योंकि अभी तक नौकरशाही का विकल्प न मिलने के कारण विकास तथा कल्याण के कार्य भी पूर्णतः नौकरशाही पर निर्भर होते हैं और आने वाली अवधारणाओं का भी यही आधार होगा। तथापि नौकरशाही ने अपने आपको काफी बदला है तथा उसकी आधुनिक प्रवृतियों को इस प्रकार समझा जा सकता है।

विज्ञान तथा प्रोद्योगिकी विकास के साथ–साथ नौकरशाही मे ंभी विशेषीकरण को सामान्य से विशेष की ओर अग्रसर करती है। कल्याणकारी राज्य का बढ़ता महत्व इसके क्षेत्र एवं दायित्व दोनों में वृद्धि कर रहा है। अतः राज्य में चिकित्सा, प्रोद्योगिकी, विधि तथा अन्य तकनीकी विषयों की भांति 'प्रशासन' भी एक महत्वपूर्ण विशेषज्ञतापूर्ण कार्य माना जाने लगा है। दूसरी ओर सामान्य अधिकारी स्वयं को प्रशासन का और सामान्य प्रशासन के अधिकारी अपने आप को किसी विशिष्ट क्षेत्र का विशेषज्ञ सिद्ध करने को उत्सुक है।

बीसवीं सदी के अंत में कंप्यूटर तथा मानव संसाधन की उन्नति में अप्रत्याशित वृद्धि ने नौकरशाही का मानव विकास संसाधन की ओर झुकाव बढ़ा दिया है। मशीन, वित्त सामग्री तथा प्रक्रियाओं की भांति कार्मिक के रूप में कार्य करता मानव भी संगठन की अमूल्य संपदा है। इसी तथ्य के मद्देनजर रखते हुए वर्तमान नौकरशाही में भी कर्मचारियों के दृष्टिकोणों तथा सक्षमताओं का विस्तार बड़े पैमाने पर दृष्टिगोचर हुआ है। इनमें सेवीवर्गीय नीति का निर्माण, योग्यता आधारित भर्ती, पर्याप्त प्रशिक्षण, पदोन्नति, आकषर्ण वेतन, कार्य निष्पादन, मूल्यांकन तथा वृति का विकास इत्यादि सम्मिलित है। किसी भी संगठन में कर्मचारियों का बना रहना उतना महत्वपूर्ण नहीं है, जितना कि कर्मचारियों का संतुष्ट व प्रतिबद्ध रहना। विकास प्रशासन और सुशासन पर जोर दिए जाने से मानवीय संबंधों की महत्ता उजागर हुई है तथा अब नौकरशाही से भी सामाजिक–मनोवैज्ञानिक संबंधों के साथ औपचारिकता को हटाकर अनौपचारिकता को पर्याप्त महत्व दिया जाने लगा है। यद्यपि नौकरशाही की कार्यप्रणाली कठोर तथा संवेदनशून्य मानी जाती है, परंतु नौकरशाही की परंपरागत कार्यशैली में समयानुकूल प्रजातांत्रिक परिवर्तन अपरिहार्य होते जा रहे हैं।

आज विकास तथा सुशासन की जरूरतों ने अनामता तथा तटस्थता संबंधी परम्परागत नौकरशाही की अवधारणाओं को बदलने पर मजबूर कर दिया है। आजकल प्रशासनिक निर्णयों एवं गतिविधियों में जनभागीदारी पर बल दिया जाता है। जनता एवं प्रशासक के बीच की दूरी को मिटाने का प्रयास हो रहा है। सुशासन की व्यापक अवधारणा, जिसमें समस्त विश्व के संपोषित विकास का दर्शन शामिल है, पर्यावरण को भी अपने लक्ष्यों में समेटे हुए है, इसलिए आज की नौकरशाही भी पर्यावरणीय अनुकूलता प्राप्त कर रही है। प्रशासनिक संस्थाएँ जहाँ देश की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिवेश को प्रभावित करती है वही उस पर्यावरण से खुद भी प्रभावित होती हैं। आज नौकरशाही पर भी दक्षता, मितव्ययिता तथा प्रभावशीलता प्राप्त करने का दबाव बढ़ा है। इसीलिए अधिकारीतंत्र के आकार की जगह गुणवत्ता एवं विशेषज्ञता पर जोर दिया जा रहा है। सूचना तकनीक के तीव्र विकास के कारण नौकरशाही की एक और नकारात्मक प्रवृति ''लालफीताशाही' पर भी लगाम कसा जा रहा है। लोकतांत्रिक मूल्यों, सिविल सोसाइटी की बढ़ती सक्रियता आदि के कारण नौकरशाही द्वारा अपनी शक्ति के बेजा इस्तेमाल पर भी नियंत्रण लगा है।(सिंह,2013 पृ011)

काबिलेगौर है कि द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व तक नौकरशाही का मूल कार्य शांति व्यवस्था तथा नियमावली कार्य को बनाए रखना था। कालांतर में विकास प्रशासन की अवधारणा को बल मिला तथा प्रशासन का मुख्य कार्य विकास गतिविधियों को शीघ्रता व सफलतापूर्वक संचालित करना हो गया। इसी कारण से अब प्रशासन को विकास प्रशासन भी कहा जाता है। किन्तु विगत कुछ दशकों में सुशासन की अवधारणा का प्रादुर्भाव भी इसी की सहयोगी अवधारणा के रूप में हुआ है तथा भूमंण्डलीकरण, उदारीकरण तथा बाजारीकरण ने आज नई प्रवृति को जन्म दिया है जो विकास प्रशासन के साथ इसे पुनः नियामकीय कार्यों की ओर अग्रसर करती है। आज देश विकसित हो या विकासशील या अल्पविकसित, राज्य को नित नई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है और उसके पास मौजूदा हथियार के रूप में कार्यकारी नौकरशाही या लोकसेवा है, जिससे उसे उन चुनौतियों से निपटना है, भले ही वह कैसी भी हो। आज नौकरशाही के समक्ष उत्तरदायी, पारदर्शी, संवेदनशील, लक्ष्योन्मुख, भागीदारी उन्मुख तथा ज्यादा प्रतिबद्ध बनने की चुनौती है जो उसकी परंपरागत मान्यताओं, नियमबद्धता, पदसोपानीक्रम, अवैयक्तिकता, तटस्थता और तार्किकता के विरूद्ध है।

प्रशासन में जवाबदेही एवं पारदर्शिता की मांग उठने से जटिलताएँ और अधिक गंभीर हो गई हैं। जैसे ही नागरिकों में समझ विकसित होती है तथा वे सक्रिय भागीदारी के लिए तैयार होते हैं तब प्रशासन का नीति–शास्त्र एक नया आयाम तथा महत्व ग्रहण करता है। पिछले कुछ वर्षों से प्रशासन और राजनीति में भ्रष्टाचार से कार्यकुशलता की अत्यधिक हानि हुई है। सिविल सोसाइटी द्वारा विभिन्न स्तरों पर ये मांग जोरदार ढंग से उठी है कि राजनेताओं एवं अधिकारी वर्ग को नैतिकतापूर्ण व्यवहार करना

चाहिए। प्रशासनिक निर्णयों में पारदर्शिता लाने हेतु न्यायपालिका भी काफी सक्रिय है। सूचना का अधिकार कानून तथा लोकसेवा गारंटी अधिनियम से समयबद्ध पारदर्शी निर्णय लेने की प्रवृति अधिकारी–तंत्र में बढ़ा है। इससे आमजन का विश्वास प्रशासन में बढ़ा है तथा उनकी परेशानी भी कम हुई है।

आजकल घरेलू निर्णयों को अंतर्राष्ट्रीय मंचों तथा संस्थाओं द्वारा लिए गए निर्णयों से संबद्ध किया जाता है तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था, संसाधनों और राजनीतिक निर्णयों की ये भूमंडलीय शाखा–प्रशाखाएँ हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद, मानवाधिकारों की बढ़ती मांग, साइबर अपराध के साथ–साथ जनजातीय विकास, लैंगिक समानता, सामाजिक सुरक्षा, पर्यावरण प्रबंधन, वामपंथी अतिवाद, समावेशी विकास जैसे ज्वलंत मुद्दों की भरमार है जिससे प्रशासन को निबटना हैं तथा सर्वस्वीकार्य समाधान भी खोजना है। पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने भी कहा था कि विकास में लिए निर्धारित राशि का मात्र 15 प्रतिशत ही जमीन तक पहुँच पाता है, शेष राशि बिचौलिए डकार जाते हैं। मशहूर कवि दुष्यंत कुमार ने ऐसे हालात पर क्षोभ व्यक्त करते हुए लिखा था – ''यहाँ तक आते–आते सूख जाती हैं कई नदियाँ, मुझे मालूम है पानी कहाँ ठहरा हुआ होगा।''यह भ्रष्टाचार की वीभत्स तस्वीर पेश करता है। यही कारण है कि विकास की अधिकांश योजनाएँ कागजों पर काफी अच्छी प्रतीत होती है परंतु धरातल पर दम तोड़ देती है। यदि, स्वतंत्रता से अब तक विकास के नाम पर खर्च की गई सार्वजनिक निधि का आकलन करें तो पाएगें कि इतनी विशाल धनराशि के व्यय से निश्चय ही विकास हो गया होता लेकिन आजादी के 70 साल बाद भी देश में गरीबी, कुपोषण, बेरोजगारी, लचर शिक्षा एवं स्वास्थ्य व्यवस्था का आलम है। एक चौथाई आबादी आज भी गरीबी रेखा के नीचे गुजर बसर कर रही है, 80 प्रतिशत आबादी की प्रतिदिन आमदनी 20 रू. से कम है, देश के 58 प्रतिशत संसाधनों पर मात्र 1 प्रतिशत धनिकों का कब्जा है, विगत 20 साल में आर्थिक तंगी की वजह से 318000 (तीन लाख अठारह हजार) किसानों ने आत्महत्या कर ली है, आदिवासियों ने हिंसक प्रतिरोध का मार्ग चुन लिया है और इन सबके मूल में विकास की गलत नीति एवं राजनीतिक–प्रशासनिक विफलता तो है ही, प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार, लूट–खसोट एवं भाई–भतीजावाद भी एक बड़ा कारण है। काबिलेगौर है कि सरकार चलाने वाले नेता बहुत जानकार और विशेषज्ञ नहीं होते इसलिए राजनेताओं को लूट–खसोट का रास्ता नौकरशाह ही बताते हैं और फिर शक्ति व सत्ता के दुरूपयोग में राजनेता के साझीदार बन जाते हैं। स्पष्ट है कि भ्रष्टाचार के मामले में नौकरशाही की जवाबदेही औरों की तुलना में ज्यादा है। इसीलिए वर्तमान केन्द्रीय नेतृत्व सबका साथ, सबका विकास के साथ–साथ *'न खाएगें न खाने देंगे'* की बात कहकर भ्रष्टाचार के प्रति जीरो टालरेंस की नीति पर चल रही है।

प्रशासनिक स्तरों की बहुलता नौकरशाही की कार्यकुशलता एवं दक्षता के मार्ग में दूसरी बड़ी बाधा है। भारतीय प्रशासन के बारे में बहुत पहले पाल एपल्वी ने कहा था कि भारतीय प्रशासन में ब्रेक तो अनेक हैं लेकिन एक्सेलरेटर एक भी नहीं है। भारतीय नौकरशाही में स्तरों की संख्या अधिक होने के कारण संचिका लगातार एक मेज से दूसरी मेज का चक्कर लगाती रहती है। उदाहणार्थ सचिवालय में लिपिक–सहायक–अधीक्षक–उपसचिव– सहायक सचिव – अपर सचिव– संयुक्त सचिव–सचिव– प्रधान सचिव आदि के 9 स्तर होते हैं। जब भी कोई मामला सचिवालय पहुँचता है, उसे एक चक्र पूरा करने में 16 स्तरों से गुजरना पड़ता है और मंत्री तक पहुँचने एवं निर्णय होने में हफ्तों–महीनों लग जाते हैं जिस कारण से नौकरशाही की प्रभावशीलता एवं दक्षता दोनों पर बुरा प्रभाव पड़ता है। आज उदारीकरण एवं बाजारवाद के दौर में जहाँ त्वरित निर्णय करने की जरूरत है वहाँ नौकरशाही विफल सिद्ध होती है।(गुप्ता और सिंह,2011पृ0155)

राजनेता अपने मनमाफिक अधिकारियों की तैनाती अपने क्षेत्र एवं मंत्रालयों में करने हेतु दवाब बनाते हैं तो नौकरशाह स्थानांतरण, पदोन्नति एवं मलाईदार पदों पर तैनाती हेतु राजनेताओं से समझौता करने लगे हैं। फलतः पूरी प्रशासनिक मशीनरी ही राजनीति में रंगी प्रतीत होने लगी है। प्रशासकों में किसी न किसी राजनेता को अपना 'गॉडफादर' स्वीकार कर उनके इशारों पर काम करने की आदत विकसित होती जा रही है। इसी तरह निष्ठावान और प्रतिबद्ध अधिकारियों को तटस्थ एवं ईमानदार अधिकारियों की योग्यता एवं वरिष्ठता लॉधकर पुरस्कृत किया जाने लगा है। इसीलिए पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त टी. एन. शेषन ने 1993 में भारतीय अफसर शाही को परिष्कृत वेश्या (Polished Callgirls)(हिन्दुस्तान टाइम्स 8 अग01993) कहकर पुकारा था जो राजनीतिज्ञों की चापलूसी एवं चाकरी मे ंलगी रहती है। इससे सुशासन की प्रक्रिया प्रभावित होती है। मोरिस जोन्स ने भी लिखा है कि ''यदि प्रशासक मंत्री की जी–हजूरी करता है, प्रत्येक कार्य मंत्री को ख़ुश करने के लिए करता है, उचित कार्य भी मंत्री की नाराजगी के डर से नहीं करता और इस प्रकार प्रशासन के मानदंडों को गिरा देता है। भारत में ऐसे अफसरों की कमी नहीं जो अपने दरबारी दृष्टिकोण के कारण मंत्रियों के पैर छूते हैं और उनके गलत कार्यों की आलोचना न करके उनका बेड़ा तो गर्क करते ही हैं, सुशासन की आत्मा को भी चोट पहुँचाते है।''(भाम्बरी, पृ051)

भारत में अन्यायपूर्ण पदोन्नति प्रणाली की वजह से भी अधिकारियों का मनोबल गिरता है और कार्य प्रभावित होता है। पदोन्नति एक ऐसा पुरस्कार है जिसके द्वारा कर्मचारी के कार्य निष्पादन को सुधारा जा सकता है लेकिन भारत में अधिकांश पदोन्नतियाँ वरिष्ठता के आधार पर की जाती है। वरिष्ठता के आधार पर पदोन्नति देने का दोष यह होता है कि यह पुरस्कार न

रहकर अधिकार बन जाती है फलतः उन सरकारी अधिकारियों में काम करने की भावना ही समाप्त हो जाती है क्योंकि उच्च अधिकारी द्वारा जो वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट लिखी जाती है वह अभी भी वैज्ञानिक व उचित मानदंडो के अनुरूप नहीं है। रिपोर्ट लिखते समय चापलूसी, आपसी संबंध, धर्म, जाति आदि तत्व भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि इन रिपोर्टों के जरिए हो सकता है किसी उभरते हुए तथा उत्कृष्ट कर्मचारी का कैरियर बर्बाद हो जाए है।

इसी तरह मनमानीपूर्ण स्थानांतरण प्रणाली, भर्ती एवं प्रशिक्षण की दोषपूर्ण प्रणाली, नौकरशाहों की गरीब विरोधी एवं कुलीनतंत्रीय मानसिकता, निर्णय लेने के मामले में औपचारिकता पर जोर तथा लकीर का फकीर बने रहना, प्रशासकों में गाँव, गरीब, मजदूर, किसान से जुड़ाव एवं आत्मीयता का अभाव के कारण विगत सात दशकों में नौकरशाही का मान–सम्मान समाज में घटा है तथा सुशासन का स्तर भी गिरा है।

अब यहाँ सवाल उठता है कि अधिकारी–तंत्र में किस प्रकार का बदलाव और सुधार लाया जाए जिससे सुशासन और विकास का मार्ग प्रशस्त हो सके। गौरतलब है कि विरासत में मिली ब्रिटिश प्रशासनिक प्रणाली में सुधार हेतु अनेक आयोग एवं समितियाँ अब तक गठित की जा चुकी है। अब तक दो प्रशासनिक सुधार आयोग –1966 में प्रथम ए.आर.सी. तथा 2005 में द्वितीय ए.आर.सी. का गठन किया गया। वीरप्पा मोइली की अध्यक्षता वाली द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने 2008 तक कुल 8 प्रतिवेदन समर्पित किए। कमिटी ने सूचना के अधिकार कानून को सुशासन का मास्टर चाभी बताते हुए उसे और प्रभावी बनाने पर जोर दिया। इसी तरह कमिटी ने प्रशासन को नागरिक केन्द्रित बनाने, ई–गवर्नेंस को बढ़ावा देने तथा प्रशासनिक नैतिकता को केन्द्रीय मूल्य बनाने पर जोर दिया। लोकसेवा में सुधार हेतु पी. सी. होता समिति का प्रतिवेदन (2004) काफी महत्वपूर्ण है। अपने प्रतिवेदन में समिति ने सिविल सेवा में सुधार हेतु 64 सुझाव दिए हैं। अपने प्रतिवेदन में समिति ने सिविल सेवा को ईमानदार, उत्तरदायी, तटस्थ तथा व्यावसायिक रूप से दक्ष बनाने की वकालत की है। कमिटी ने जोर देकर कहा कि यदि सिविल सेवा में तुरंत सुधार नहीं किया गया तो फौलादी ढांचे को जंग लग जाएगीं। समिति के कुछ महत्वपूर्ण सुझाव निम्नवत् हैं –

1. सिविल सेवा में बढ़ते भ्रष्टाचार पर चिंता प्रकट करते हुए समिति ने सिफारिश की है कि संविधान के अनुच्छेद 311 में संशोधन करके राष्ट्रपति व राज्य को इस योग्य बनाया जाय कि वे उन लोक सेवकों को सेवामुक्त या हटा सके, जो आय से ज्ञात श्रोतो से अधिक संपति रखते हैं या भ्रष्ट गतिविधियों में संलग्न है।

2. भ्रष्टाचार निरोधक अधि0 1988 के तहत दोषी पाए गए अधिकारियों के खिलाफ विभागीय कार्यवाही करने से पहले ऐसे अधिकारियों के मामलों की जांच करने के लिए सभी विभागों में केन्द्रीय सतर्कता आयोग के अधीन विशेषज्ञ समितियों की स्थापना की जानी चाहिए।

3. सभी सिविल सेवकों की वार्षिक संपत्ति रिपोर्ट बेवसाइट पर पेश किया जाना चाहिए तथा भ्रष्ट नौकरशाहों द्वारा नाजायज तरीके से एकत्र की गई सपंत्ति को जब्त करने के लिए कठोर नियम बनाए जाने चाहिए। बिहार सरकार ने इस तरह का एक कानून बनाया है।

4. कमिटी ने यह भी सिफारिश की है कि 15 साल की सेवा पूरी करने के बाद अधिकारियों के कार्य निष्पादन का कठोर पुनर्निरीक्षण एवं मूल्यांकन किया जाए और जो लोकसेवक कसौटी पर खड़ा नहीं उतरे उसे सेवामुक्त कर दिया जाए।

5. सिविल सेवक अपनी सेवानिवृति के अथवा त्याग–पत्र के तुरंत बाद किसी राजनीतिक दल का सदस्य बनकर चुनाव नहीं लड़े। इसके लिए कम से कम दो साल का विराम काल होना चाहिए।

6. समिति का कहना है कि निश्चित कार्यकाल के अभाव में लोकनीति को प्रभावी ढ़ंग से लागू नहीं किया जा सका है। अतः किसी भी पद पर एक निर्धारित कार्यकाल हेतु नियुक्त किया जाना चाहिए। केन्द्रसरकार द्वारा इस संबंध में कानून बनाया जा चुका है।

7. ईमानदार, जवाबदेह एवं पारदर्शी कार्यप्रणाली हेतु अप्रासांगिक नियमों के स्थान पर नए तथा सरल नियम बनाने चाहिए तथा ई–गवर्नेंस को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

इसके अलावे निम्नलिखित सुझावों पर अमल करने से नौकरशाही की दक्षता एवं प्रभावशीलता में वृद्धि होगी –

1. अधिकारियों की किसी भी कार्य पर तैनाती करने से पहले उनकी पृष्ठभूमि व रूचियों को ध्यान मे ंरखा जाना चाहिए ताकि वे बेहतर निष्पादन दे सकें।

2. नौकरशाही के राजनीतिकरण को रोकने के लिए जरूरी है कि राजनेताओं को भी प्रशासनिक मामलों का प्रशिक्षण दिया जाए तभी वे प्रशासन की समस्याओं को समझ सकेंगे तथा बेहतर राजनीतिज्ञ–प्रशासक संबंध विकसित होंगे।

3. सुरेन्द्रनाथ समिति ने अखिल भारतीय सेवाओं में वरिष्ठता के साथ निष्पादन मूल्यांकन की एक से लेकर दस तक अंकों वाली ग्रेडिंग प्रणाली की सिफारिश की है। वास्तव में बेहतर निष्पादन मूल्यांकन के बिना आदर्श लोकसेवा को नहीं प्राप्त किया जा सकता।

4. उच्च पदों पर सामान्यज्ञों को नियुक्त किया जाए या विशेषज्ञों को, इस विवाद में उलझे बिना उन विभागों की बागडोर विशेषज्ञों को सौंप देनी चाहिए जिनमें अनुसंधान एवं विज्ञान की आवश्यकता है तथा सामान्यज्ञों के बीच में विशेषज्ञ बनाने के प्रयास हों और विशेषज्ञों को प्रशिक्षण देकर सामान्यज्ञ बनाने के भी प्रयास होने चाहिए ताकि इनके बीच की दूरी घटे।

दुर्भाग्य से प्रशासनिक सुधार हेतु दिए गए अधिकांश सुझाव एवं सिफारिश राजनीतिक इच्छाशक्ति के अभाव में धूल फांक रही है। अतः सरकार को बिना देर किए प्रशासनिक सुधारों के लिए गठित आयोग, समितियों आदि के सुझावों को पूरी ईमानदारी से लागू करना चाहिए यह सुखद संयोग है कि वर्तमान केन्द्र सरकार शासन–प्रशासन में नवोन्मेष को बढ़ावा दे रही है, भ्रष्टाचार के प्रति जीरो टालरेंस की नीति पर कठोरता से कायम है। 'न्यूनतम सरकार अधिकतम शासन' सरकार का नारा है जो एक प्रकार से सुशासन की अभिव्यक्ति है। नौकरशाही को सक्षम, प्रभावी एवं जनोन्मुख बनाने हेतु 'रिफार्म, परफार्म एवं ट्रांसफार्म पर जोर दिया जा रहा है। प्रोन्नति को निष्पादन क्षमता (Performance) से जोड़ा जा रहा है ताकि अधिकारियों में उत्तरदायित्व की भावना का विकास हो। वर्तमान नेतृत्व की कार्यशैली पेशेवर है तथा उसके द्वारा सरकार में नई कार्यसंस्कृति पैदा कर प्रशासन को कार्पोरेट जामा पहनाने का प्रयास किया जा रहा है। मेक इन इंडिया, स्किल इंडिया, डिजिटल इंडिया, क्लींन इंडिया, ट्रांसपेरेंट इंडिया और ट्रांसफामिंग इंडिया जैसे नए–नए शब्द गढ़े जा रहे है जो बदलते एवं बढ़ते भारत की कहानी बयान कर रहे हैं और इन सबमें नौकरशाही की केन्द्रीय भूमिका है। स्पष्ट है कि सुशासन एवं विकास को केन्द्र में रखकर भारतीय नौकरशाही भी वैश्विक बदलाव के साथ कदमध्ताल करने का प्रयास कर रही है तथा कार्यसंस्कृति में बदलाव के लिए जरूरी कदम उठाए जा रहे हैं। 'आपकी सरकार आपके द्वार' कार्यक्रम के तहत अधिकारियों को ग्रामीण क्षेत्र की समस्याओं एवं चुनौतियों से रू–ब–रू होने तथा उसका समाधान निकालने का अवसर दिया जा रहा है। ऐसे में यह जरूरी हो गया है कि सरकार प्रशासन को कार्यकुशल, जनोन्मुखी एवं परिणामदायक बनाने के लिए बिना देर किए प्रशासनिक सुधारों को लागू करे। देश का सिविल सोसाइटी एवं मीडिया शासन–प्रशासन की गुणवत्ता बढ़ाने हेतु लगातार प्रशासनिक सुधारों की बात कर रहा हैं लेकिन **सुशासन की चाभी अधिकारियों की कार्यसंस्कृति एवं मानसिकता बदलने में निहित है। अन्य तथ्य तो स्वतः ही बदल जाएँगे।** भारतीय प्रशासन में ऐसे उदाहरण भरे हैं जहाँ एक ही अधिकारी की कार्यशैली, ईमानदारी एवं सकारात्मक मानसिकता ने तस्वीर बदल कर रख दी। चुनाव आयोग जैसी नखदंत विहीन संस्था को टी. एन. शेषन जैसे एक अधिकारी ने कायापलट कर रख दिया। इस तथ्य की पृष्ठभूमि में यह बात निहित है कि सरकारी कार्मिकों की नकारात्मक मानसिकता सरकार की जटिल कार्यसंस्कृति का नतीजा है और इस समस्या का कोई सरल समाधान नजर नहीं आता।

नौकरशाही को खुद ही कार्यसंस्कृति में बदलाव का वाहक बनना चाहिए और इसी तरह प्रशासनिक सुधार लाने से पहले उनकी मानसिकता बदलने के प्रयास किए जाने चाहिए तभी सुशासन और नौकरशाही एक–दूसरे के पूरक सिद्ध हो सकेगें। स्पष्ट है कि भारत में व्यवस्था रूपी हिमालय से सुशासन रूपी गंगा प्रवाहित करने हेतु नौकरशाही को अहिर्निश भागीरथ प्रयास करने की दरकार तो है ही, प्रशासनिक एवं राजनीतिक संस्कृति में भी बदलाव अपेक्षित है तभी नतीजे जल्द हासिल होंगे। संतोष का विषय है कि वर्तमान केन्द्रीय नेतृत्व अपेक्षित सुधार एवं बदलाव हेतु प्रतिबद्ध एवं कृतसंकल्पित दिखाई दे रही है तथा सुशासन एवं समावेशी विकास इनके नीति के केन्द्र में है इसलिए अगले कुछ वर्षों में देश की सूरत एवं सीरत में गुणात्मक एवं धनात्मक बदलाव की संभावना बलवती नजर आ रही है।

संदर्भ

शर्मा, एम. पी.(1976), *लोकप्रशासन–सिद्धांत एवं व्यवहार,*

मार्क्स एफ. एम. (संपादित)(1969) *एलिमेंट्स ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन,*

बाटा के. डे (1978). : *ब्यूरोक्रेसी, डबलपमेंट एंड पब्लिक मैनेजमेंट इन इंडिया,*

क्राइजर मार्टिन(1992) : *बेवर एंड दि रियलिटी,*

मनुस्मृति, नवम अध्याय, 324वॉ श्लोक

कौटिल्य : *अर्थशास्त्र, प्रथम अध्याय 19वॉ श्लोक,*

विलसन, वुडरो(1886) : *दि स्टडी ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन*

गुडनाउ(1990) : *पालिटिक्स एंड एडमिनिस्ट्रेशन,*

मिनोचा ओ. पी.(1985) : गुड गवर्नेंस न्यू पब्लिक मैनेजमेंट पर्सपेक्टिव, आइ जे पी ए, जूलाई–सितम्बर,

भट्टाचार्य, मोहित(2008) : लोक प्रशासन के नए आयाम, जवाहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली,

जैन, आर. बी.(2006), *भारतीय समाज, अधिकारी तंत्र और सुशासन,* हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय,

सिंह, वी. पी., भारत में सुशासन की चुनौतियाँ, *योजना,* जनवरी 2013, पृ. 11.

गुप्ता एवं सिंह,(2011) *सुशासन,* नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली,

हिन्दुस्तान टाइम्स, पटना संस्करण (दैनिक), 8 अगस्त, 1993

.